दूसरी नज़र

■ पी चिदंबरम

पुराने को उतार फेंकने का वक्त

तमिलनाडु में त्योहार को भोगी कहा जाता है। देश के दूसरे हिस्सों में इसे लोहड़ी कहते हैं। फसल कटने का वक्त करीब है। यह वह समय है जब सांडों, गायों और हलों को पूजा जाता है, इसी समय किसानों के साथ जश्न भी मनाया जाता है। नई सुबह के जश्न से पहले हमें फटे-पुराने कपड़ों, खेती के टूटे-फूटे औजारों और साल भर जमा हुईं बेकार की चीजों को बाहर कर देना चाहिए। भोगी के दिन हम इन चीजों को सांकेतिक रूप से जला देते हैं। अगला दिन पोंगल या संक्रांति का होता है, फसल का पर्व। तमिलनाडु में जल्लीकट्टू (सांडों की लड़ाई) इन आयोजनों का हिस्सा होता है।

'पुराने को उतार फेंकने, नए को धारण करने' में भी फसल के चक्र से जुड़ी भावना निहित है। लोकसभा चुनावों के मौके पर मैं खुद अपने से पूछ रहा हूं कि नई सरकार का स्वागत करने से पहले हमें किसका परित्याग कर देना चाहिए। कुछ थोड़े-से बिंदु ही मैं बना पाया।

बल प्रयोग की नीति

सबसे पहले तो हमें उन जटिल समस्याओं के प्रति बल प्रयोग की मानसिकता को छोड़ना होगा, जो सत्ता की ताकत के प्रदर्शन से हल नहीं हो सकती हैं। जम्मू और कश्मीर में बल प्रयोग की यह नीति जिस सबसे बुरे रूप में सामने आई, उससे यह धारणा बनी कि यह बल प्रयोग, सैन्य ताकत और बहुमत की राय लिए हुए है, और इसने राज्य की पूरी आबादी को अपनी जद में ले लिया और नौजवानों को आतंकवाद की ओर धकेला। एक होशियार नौजवान और 2010 के आइएएस टॉपर ने इसी हताशा और निराशा में सिविल सेवा से इस्तीफा दे दिया। पूर्वोत्तर राज्यों में इसी बल प्रयोग की नीति के तहत राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर तैयार करने का काम तेज किया गया और चालीस लाख सात हजार सात सौ सात लोग 'राज्य से बाहर' कर दिए गए। अब यही बल प्रयोग का विचार जातीय आबादी पर नागरिक संशोधन विधेयक का डंडा चला रहा है, जिनमें दूसरे देशों, खासतौर से बांग्लादेश के 'उत्पीड़ित अल्पसंख्यक' हैं।

बल प्रयोग की इस नीति को छोड़ना होगा।

दूसरा, उन कानूनों को हटाना या नए सिरे से बनाना होगा जो अन्यायपूर्ण हैं। इस सूची में सबसे ऊपर भारतीय दंड संहिता की धारा 124 ए है, जो देशद्रोह से संबंधित है। इसे एकदम खत्म कर दिया जाना चाहिए। इसी तरह सशस्त्र बल (विशेष शक्तियां) कानून है जो सैन्य बलों को किसी को भी मार डालने का अधिकार देता है, इसे वापस लिया जाए या फिर इसमें व्यापक सुधार किए जाएं।

वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) से संबंधित कानूनों को नए सिरे से तैयार किया जाना चाहिए। अगर कोई केंद्रीय जीएसटी कानून के मसविदे को (जिस रूप में इसे पारित किया गया, कानूनी अंग्रेजी भाषा में) समझ लेने का दावा करता है तो ऐसे व्यक्ति को वकील बनने के लिए कानून की परीक्षा पास करने की जरूरत नहीं है! जीएसटी कानूनों में मुनाफाखोरी रोकथाम प्रावधान को खत्म करना चाहिए। स्टार्ट-अप पर से ऐंजल टैक्स खत्म किया जाना चाहिए।

गरीबों के प्रति भेदभाव

तीसरा, गरीबों के लिए बनाई गईं खामियों भरी और भेदभाव वाली योजनाओं को बंद किया जाना चाहिए और उनकी जगह ऐसी योजनाएं लागू की जानी चाहिए जो गरीब को फायदा पहुंचाने वाली हों। इसकी लंबी सूची है- मुद्रा लोन, स्वच्छ भारत (क्लीन इंडिया) जिसके तहत ऐसे शौचालय बनाए गए, जिनका या तो इस्तेमाल ही नहीं किया गया, या इस्तेमाल करने लायक ही नहीं थे, फसल बीमा योजना जिसने किसानों को लूटा और बीमा कंपनियों को मालामाल बनाया, कौशल विकास योजना से सिर्फ अट्ठाईस फीसद प्रशिक्षणार्थियों को ही फायदा मिल पाया, और आयुष्मान भारत योजना के लिए पर्याप्त पैसा नहीं है और वे गरीब इससे बाहर हो गए हैं, जो निजी अस्पतालों में जा नहीं सकते। अगर आपका किसी योजना से पाला पड़ा है तो अपने अनुभव के आधार इस सूची में उसे भी जोड़ सकते हैं। इन योजनाओं में जो खामियां हैं उन्हें दूर किया जाना चाहिए।

चौथा, आधार का दायरा जो जरूरत से ज्यादा फैला दिया गया है, उसे बदला जाना चाहिए। आधार कानून सरकार को सिर्फ 'अनुदानों, लाभों और सेवाओं' के हस्तांतरण के लिए अधिकृत करता है। सरकार ने तो इसके दायरे को जरूरत से ज्यादा फैला दिया, कई कामों के लिए इसे जरूरी बना दिया और इसके नाम पर लोगों का निजी डाटा जमा कर लिया। गैरकानूनी रूप से जो डाटा जमा किया गया है उसे खत्म किया जाना चाहिए। इसे कैसे खत्म किया जा सकता है, यह एक सवाल है, जिसका जवाब अगली सरकार को देना होगा।

ईवीएम बनाम मतपत्र

और आखिर में, ऐसे सजग नागरिक हैं, जो इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों (ईवीएम) की विदाई और मतपत्र प्रणाली की वापसी चाहते हैं। दूसरी ओर, निर्वाचन आयोग और सरकार को ईवीएम पर अटूट भरोसा है। मैं ईवीएम का समर्थक इसलिए हूं, क्योंकि वैध मतदान के लिए यह सबसे आसान है, लेकिन जिस बड़ी संख्या में इन मशीनों को लेकर गड़बड़ी की घटनाएं सामने आईं, उन्होंने मुझे हैरान कर दिया। इसी के बाद में वीवीपैट की बात की थी। अब, (हर विधानसभा क्षेत्र में) एक ईवीएम और एक वीवीपैट का मिलान किया जा रहा है। औसत रूप से एक निर्वाचन क्षेत्र में ढाई सौ से तीन सौ मतदान केंद्र होते हैं। इसलिए इलैक्ट्रॉनिक यूनिटों में गड़बड़ी का पता लगने की संभावना एक फीसद से भी कम होती है। इसलिए मैंने यह कहा था कि हरेक ईवीएम में मतों की गणना का मिलान वीवीपैट पर्चियों से किया जाना चाहिए। इसके पीछे मतगणना और नतीजों में देरी का जो तर्क दिया गया, वह कमजोर है। अगर नतीजे आने में तीन-चार घंटे देरी हो भी जाती है तो इससे कुछ नहीं बिगड़ने वाला, बल्कि इससे ईवीएम में लोगों का जो भरोसा बनेगा, वह कहीं बड़ा हासिल होगा।

मुझे पक्का भरोसा था कि मेरे और अन्यों का सुझाव मतपत्र प्रणाली की वापसी की मांग करने वालों के लिए संतोषजनक जवाब होगा, लेकिन मेरा उत्साह तब ठंडा पड़ गया जब मैंने एक अखबार (द हिंदू, 22 जनवरी, 2019) में जी. संपत का इस बारे में तर्क पढ़ा। लेखक के अनुसार, मतपत्र प्रणाली मत, गोपनीय मतपत्र और प्रत्यक्ष मतगणना के तीन परीक्षणों को ही संतुष्ट करेगी। ईवीएम-वीवीपैट प्रणाली इन तीनों ही परीक्षणों के मामले में खरी नहीं उतरती, जैसा कि जर्मनी की एक संवैधानिक अदालत ने अपने फैसले में यह बात कही है। लेखक या जर्मनी की अदालत से असहमति व्यक्त कर पाना मुश्किल है। इसलिए जब मैं यह नहीं कह सकता कि ईवीएम को हटाया जाए, तो हमें यह मांग करनी चाहिए कि सभी मतदान केंद्रों पर ईवीएम और वीवीपैट पर्चियों का मिलान किया जाए।

अगर हम इस गंभीर संकट से अपने को बचा पाए, तो शायद हम तालाब से पानी पी सकते हैं।

अंतिम उपाय नहीं कर्जमाफी

वीरेंद्र कुमार पैन्यूली

अब विशेषज्ञ, आमजन और खुद प्रबुद्ध किसान नेता भी मानने लगे हैं कि बार-बार की कर्जमाफी किसानों की समस्याओं का समाधान नहीं हो सकती। कर्जमाफी कोई इलाज नहीं है। आंकड़े बताते हैं कि भारत में बहुत सारे किसान परिवारों के पास आधा हेक्टेयर जमीन भी नहीं है। इतनी कम जमीन पर साल भर परिवार पालने लायक उगाना और बचे हुए को बाजार में बेच कर लाभ कमाना लगभग असंभव है। मौसम की मार अतिरिक्त अनिश्चितता पैदा कर देती है। ऐसे में किसान के लिए कर्ज लौटाना आसान नहीं होता। सामान्यतया एक किसान परिवार की औसतन प्रति माह जितनी आय होती है, उससे ज्यादा परिवार का औसत खर्च होता है। इसलिए किसान परिवार कर्जे की स्थिति में रहता है। नतीजतन, सरकारों और राजनीतिक दलों को कर्जमाफी की घोषणा करनी पड़ती है। हालांकि बहुत पहले केंद्रीय वित्तमंत्री ने चेताया था कि जो राज्य किसानों की कर्जमाफी करेंगे, उन्हें इसके लिए अपने वित्तीय संसाधन अपने आप जुटाने होंगे। पर आज तक राज्य एक के बाद एक किसानों की कर्जमाफी की घोषणाएं करते रहे हैं।

किसान की कर्जग्रस्तता तभी कम होगी, अगर उसकी फसल उत्पादन की लागत में कमी आए। पर हो उसके उलट रहा है। कारण है कि जमीन के फसल उगाने में खपे पोषक तत्वों की फिर से जमीन में समय से वांछित भरपाई होने में दिक्कतें आ रही हैं। कृषि के लिए पोषक क्षेत्र कहे जाने वाले क्षेत्रों में भी जिनसे पोषक तत्वों की सतत आपूर्ति की संभावनाएं खेती में बनी रहती थीं, वहां भी पारिस्थितिकीय अवमूल्यन हुआ है या प्रतिबंध उपजे हैं। मसलन, पहाड़ी क्षेत्रों में समीप के जंगल और उनकी जैव विविधता तथा जलागम क्षेत्रों में मृदा संरक्षण और जल संरक्षण की उचित व्यवस्था न होने से पहाड़ी खेती के लिए भरोसेमंद पोषक क्षेत्र के अंश योगदान में कमी आई है।

मुद्दा

> नीति निर्माताओं को इस सच्चाई से आंख नहीं मूंदना चाहिए कि किसान के तनावों का अंत अगर भविष्य को सोचते हुए करना है, तो केवल वित्तीय कर्जमाफी से काम नहीं चलेगा।

उत्पादन लागत कम करने के उपायों के रूप में जैविक खेती अपनाने का सुझाव दिया जा रहा है। अगर कम लागत और उत्पादों के अच्छे दामों की प्राप्ति के लिए जैविक खेती अपनाई जानी ही है, तो उसके लिए भी जैव विविधता की बहुत आवश्यकता है। साथ ही स्वस्थ जलागम क्षेत्रों और पोषक क्षेत्रों के रूप में अच्छे चारागाहों की बहुत आवश्यकता है। जैविक खेती बिना जैव विविधता और पशुपालन के नहीं हो सकती। सो, इसके लिए भी संवेदित होना और समझदारी बनाना आवश्यक है कि किसानों का बैंकों से लिया गया कर्ज सरकार भुगतान तो कर देगी, पर उस कर्ज को लौटाने के भी प्रावधान होने चाहिए, जो हम खेत की मृदा से हर फसल चक्र में लेते रहते हैं। खासकर सूक्ष्म पोषक तत्वों के रूप में। खेतों से जब तेज बहाव के कारण या नंगे क्षेत्रों से आंधी हवा के कारण जो मृदा की ऊपरी परत का क्षरण होता है, वह भी प्रकृति से लिया गया कर्ज है, जो समय से और उचित राशि में न लौटाया गया, तो देर-सबेर यह किसान की ऋणग्रस्तता को भी बढ़ा देगा। क्योंकि जब औद्योगिक और सघन खेती की बात हो रही हो तो बैंकों से ज्यादा ऋण लेने की आवश्यकता ही नहीं रहती, बल्कि मिटट्री से भी ज्यादा संसाधन जुटाने की जरूरत हो जाती है।

मिटट्री का ठीक से संरक्षण न हो, तो खेतों की ऊपरी सतह पर जो पोषक पूरक रसायन डाले भी जाते हैं वे बरसात के साथ बह जाते हैं। शहरीकरण की भूख, नगर निकायों का प्रसार तथा कई लेनों वाले राजमार्गों और नहरों के पटने के कारण भी किसानों का खेती करना मुश्किल हुआ है। इनके कारण भी पोषक तत्वों का भूमिगत रिसाव और उनकी मात्रा बाधित हुई है। प्रदूषण खेती और बगीचों पर प्रतिकूल असर डाल रहा है। ये सब भी जमीन के उन पोषक तत्वों के संसाधन बैंक को क्षरित करते हैं, जिनसे किसान अब तक ऋण लेता रहा है और उसके उत्पादन को सहायता मिलती रही है। जब किसान के मित्र जीवों, पक्षियों, तितलियों, केचुओं, परागण में मददगार कीट-पतंगों में कमी हो जाती है तो मौद्रिक सहयोग बहुत कारगर नहीं होते हैं।

वैज्ञानिक मंगला राय ने एक साक्षात्कार में कहा था कि जहां तीन दशक पूर्व किसान एक किलो नाइट्रोजन, पोटाश और फास्फोरस का उपयोग कर पचास किलो गेहूं पैदा करते थे, वहां आज वे उससे केवल आठ किलो गेहूं पैदा कर पा रहे हैं। निस्संदेह इनमें बीजों के प्रकार की भी भूमिका होगी। बोरोन, मैग्नीज, मौलीबींडम, कॉपर, जिंक, आयरन, कैल्शियम, क्लोरीन, मैग्नीशियम, नाइट्रजेजन, फास्फोरस, सल्फर फसलों की आवश्यकता सूक्ष्म पोषक के रूप में पूरा करते हैं। किसान पर जमीन का भी कर्ज है। सरकार उसके इस ऋण मोचन पर भी सोचे।

एक बात और वैज्ञानिक संदर्भों में समझी जानी चाहिए। स्वाइल कार्ड या मृदा कार्ड से जमीन के रासायनिक तत्वों की जानकारी केवल मृदा की रसायनिक स्थितियों या मृदा रसायनशास्त्र से संबंधित होती है। पर खेती के उत्पादन सुधार में मृदा की भौतिक स्थितियों जैसे उनकी रंध्रता, ठोसपन आदि की मददगार स्थितियों का भी होना लाभप्रद रहता है। किसानों को इस क्षेत्र में भी आवश्यक जानकारी दी जानी चाहिए।

कुछ मामलों में सरकारें भू-उपयोग में बदलाव की अपनी नीतियों के चलते उपरोक्त संदर्भों में अपने को भी कठघरे में पाएंगी। किसान के खेतों के पास की जमीनों को जब आसान भू-उपयोग के बदलाव के बाद ऐसे कारक पैदा हो जाते हैं, जो उस किसान के खेत में, जो अब भी खेती करना चाहता है, नमी की कमी हो जाती है। कारखानों के अपशिष्टों से घातक रसायनों का प्रवाह होने लगता है, धुंआ बढ़ जाता है, तो भी किसान जमीन से संसाधन लेने के बावजूद कर्ज की भरपाई करने में असमर्थ होने लगता है। इसलिए किसान पर जमीन की उधारी बनी रहती है। सरकार उसके ऋण मोचन पर भी सोचे, बेशक उसके लिए प्रदर्शन नहीं हो रहे हैं।

रिजर्व बैंक के पूर्व गवर्नर रघुराम राजन का मानना है कि खेती की ऋण माफी की घोषणा राजनीतिक दलों के घोषणा-पत्रों और वादों का हिस्सा नहीं होना चाहिए। एक पत्र में एक आम नागरिक ने लिखा था कि किसान कर्जमाफी अगर ऐसे ही होती रही तो कृषि सरकारी खजाना भरने के बजाय खाली करने का काम करेगी। इसी परिप्रेक्ष्य में इस तथ्य पर भी ध्यान देना चाहिए कि जिस तरह व्यावसायिक एकल फसल हो रही है तथा साथ ही खेतों को पारंपरिक तौर का आराम नहीं दिया जा रहा है, उससे जमीन के कृषि पोषक तत्वों का खजाना भी खाली हो रहा है। एक फसल के बाद तुरंत दूसरी फसल बोने की आपाधापी भी किसान के पराली जलाने का एक कारण है। ऐसे कारनामों से खजाना और खाली हो रहा है। पहले पारंपरिक ढंग से किसान ऐसी फसलें और ऐसा फसल चक्र अपनाते थे कि पिछली फसल में लगी जमीन के सूक्ष्म तत्वों की लागत अगली बोई फसल से हो जाती थी। न भूलें कि उगी हुई फसलों की छिपी लागत प्रकृति वहन करती है। यह लागत वायुमंडल से भी मिलती है और जमीन से भी। चूंकि किसान सीधे दाम देकर इसे नहीं खरीदता है, इसलिए उसकी तरफ से कर्जमाफी की मांग नहीं आती है। पर जिम्मेदार सरकारों के नीति निर्माताओं को इस सच्चाई से आंख नहीं मूंदना चाहिए कि किसान के तनावों का अंत अगर भविष्य को सोचते हुए करना है, तो केवल वित्तीय कर्जमाफी से काम नहीं चलेगा।

अस्त्र और ब्रह्मास्त्र

क्या प्रियंका गांधी कांग्रेस पार्टी के लिए ब्रह्मास्त्र का काम कर सकती हैं? क्या अब नरेंद्र मोदी का दुबारा प्रधानमंत्री बनना नामुमकिन हो गया है? सवाल हमसे पूछ रहे थे इंडिया टुडे के राहुल कंवल दावोस की एक बर्फीली सड़क के किनारे। मेरे अलावा इस छोटी, ठिठुरती भीड़ में थे कुछ राजनीतिक पंडित और कुछ उद्योगपति। मेरा जवाब था कि शायद प्रियंका का सक्रिय राजनीति में इस समय आना उनके भाई को ज्यादा नुकसान कर सकता है, मोदी को कम। राहुल गांधी अपने राजनीतिक जीवन में पहली बार अपनी पार्टी को चुनाव जिता पाए हैं, सो 'पप्पू' से बन गए हैं लीडर अभी। अभी तो क्या यह समय था प्रियंका को राजनीतिक बिसात पर उतारने का?

वक़्त की नब्ज़

■ तवलीन सिंह

> कांग्रेस पार्टी की समस्या यह है कि अभी तक वह उत्तर प्रदेश में जीतने की स्थिति में नहीं है, सो प्रियंका का 'ब्रह्मास्त्र' चलाया गया है, ताकि इस अति-महत्त्वपूर्ण प्रदेश में इसका असर देखने को मिले। उत्तर प्रदेश तैयार भी दिख रहा है राजनीतिक परिवर्तन के लिए।

प्रियंका अपने भाई से कई चीजों में आगे हैं। करिश्मा ज्यादा है, हिंदी अच्छी बोल लेती हैं, भाषण देती हैं उनसे अच्छे, लोगों से घुलमिल लेती हैं उनसे ज्यादा और ऊपर से उनकी शक्ल मिलती है अपनी दादी से। मैं इंदिरा गांधी की मुरीद नहीं हूं, लेकिन मुझे भी स्वीकार करना पड़ेगा कि आम जनता की राय में उनकी गिनती देश के महान राजनेताओं में है। आम जनता उनको याद करती है प्यार से, क्योंकि उनको विश्वास है कि वे गरीबी हटाने का काम ईमानदारी से कर रही थीं। गरीबी हटी नहीं, तो दोष उनका नहीं, उनके अफसरों और मंत्रियों का था।

प्रियंका में चूंकि इंदिरा गांधी की झलक दिखती है, उनके बारे में अक्सर लोग कहते हैं कि वे देश के किसी भी चुनाव क्षेत्र से जीत सकती हैं। याद है मुझे कि बनारस में 2014 के आम चुनावों में लोग यहां तक कहा करते थे कि मोदी को भी हरा सकती हैं। सो, इसमें दो राय नहीं कि प्रियंका का राजनीति में आना एक किस्म का ब्रह्मास्त्र है, लेकिन निशाना कहां होगा, कहना मुश्किल है।

फिलहाल यह कहना गलत न होगा कि कांग्रेस ने एक बार फिर साबित कर दिया है कि उसके पास राजनीतिक हथियार एक भी नहीं है गांधी परिवार के अलावा। अगर आज यह हथियार शक्तिशाली नजर आ रहा है, तो दोष नरेंद्र मोदी का है। उन्होंने परिवर्तन और विकास लाने के अपने वादे पूरे किए होते, तो देश की आर्थिक दिशा अभी तक बदल गई होती। थकी हुई समाजवादी आर्थिक नीतियों की जगह आज होतीं ऐसी नीतियां, जिनके द्वारा पैदा हो सकते करोड़ों रोजगार के अवसर। मोदी ने प्रधानमंत्री बनते ही इशारा तो किया था कि वे देश को नई आर्थिक दिशा में ले जाना और भारत को ऐसा देश बनाना चाहते हैं, जहां से नौजवानों को पलायन करके अन्य देशों में रोजगार की तलाश में न जाना पड़े। फिर जब उन पर राहुल गांधी ने 'सूट-बूट की सरकार' वाला ताना कसा, तो डर कर वापस आ गए उसी आर्थिक रास्ते पर, जिस पर कांग्रेस के प्रधानमंत्री दशकों से भारत को लेते आए हैं।

मोदी का दोष नहीं है कि उनको ऐसी अर्थव्यवस्था मिली विरासत में, जिसमें सरकारी खर्चे सरकारी आमदनी से ज्यादा थे। सोनिया-मनमोहन के दौर में हुआ यह था कि समाजवाद के नाम पर बड़ी-बड़ी योजनाएं बनीं गरीबों में खैरात बांटने की। इनमें अहम थी मनरेगा, जो असली रोजगार के बदले बेरोजगारी भत्ता देने का काम करती है। इस योजना में जो हजारों करोड़ रुपए निवेश हुए हैं, अगर ग्रामीण भारत में असली रोजगार पैदा करने में लगे होते, तो शायद किसान इतने बेहाल और दुखी न होते, जो आज हैं देश भर में।

मोदी ने खुद कहा था लोकसभा में अपने पहले भाषण में कि शर्म की बात है कि सत्तर वर्ष बाद कांग्रेस की आर्थिक नीतियां इतनी नाकाम रही हैं कि एक ऐसी योजना बनी है, जो लोगों को गड्ढे खोदने और फिर उनको भरने के लिए पैसा देती है। मनरेगा को समाप्त करने की लेकिन उन्होंने हिम्मत नहीं दिखाई।

न ही मोदी ने उस नई आर्थिक दिशा की तरफ बढ़ने की हिम्मत दिखाई है। हां इतना जरूर किया है कि कांग्रेस की खैरात बांटने वाली योजनाओं को डिजिटल बना कर भ्रष्टाचार कम किया है, लेकिन दिशा न बदलने का खमियाजा अब भुगतने लगे हैं मोदी। परिवर्तन न लाने का खमियाजा भुगतने लगे हैं और सबूत इसका था मध्यप्रदेश, राजस्थान और छत्तीसगढ़ जैसे राज्यों में कांग्रेस के हाथों हारना। कांग्रेस पार्टी के आज हौसले बुलंद हैं, तो इसलिए कि अब सर्वेक्षण भी बताने लगे हैं कि मोदी किसी भी हालत में भारतीय जनता पार्टी के लिए दुबारा पूर्ण बहुमत नहीं ला सकेंगे।

कांग्रेस पार्टी की समस्या यह है कि अभी तक वह उत्तर प्रदेश में जीतने की स्थिति में नहीं है, सो प्रियंका का 'ब्रह्मास्त्र' चलाया गया है, ताकि इस अति-महत्त्वपूर्ण प्रदेश में इसका असर देखने को मिले। उत्तर प्रदेश तैयार भी दिख रहा है राजनीतिक परिवर्तन के लिए। यहां योगी आदित्यनाथ ने लव जिहाद और गोरक्षा के नाम पर इतनी अराजकता फैला रखी है कि सब मानते हैं कि भारतीय जनता पार्टी का इस प्रदेश में दोबारा पचहत्तर सीटें लेना बिलकुल असंभव हो गया है।

सो, प्रियंका का 'ब्रह्मास्त्र' कहीं काम आएगा, तो उत्तर प्रदेश में, लेकिन आसानी से नहीं, क्योंकि यहां फिलहाल बुआ-भतीजे की ताकत ज्यादा है। इतना जरूर है कि कांग्रेस की स्थिति इस प्रदेश में थोड़ी मजबूत हो जाएगी प्रियंका के आने से। खासकर इस राज्य के पूर्वी हिस्से में। यहां कई वर्षों से कांग्रेस कार्यकर्ताओं की मांग रही है प्रियंका को राजनीति में लाने की। हर चुनाव में राय बरेली और अमेठी में पोस्टर नजर आते हैं, जिनमें बेटी प्रियंका को लाने की मांग रखी जाती है। सो, यहां कांग्रेस का परिवारवाद काम आ सकता है। लेकिन यह भी कहना जरूरी है कि इस किस्म का लोकतांत्रिक सामंतवाद भारत के लिए सिर्फ नुकसानदेह साबित हो सकता है।

इब्तिदा-ए-इश्क है रोता है क्या

एक से एक आश्वस्तिकारी दृश्य दिखते हैं : कोलकाता में पीएमों की पैठ लगी है। पीएम के योग्य एक से एक उत्तम कोटि के कैंडीडेट एक मंच पर हैं। एक नहीं, दो नहीं, तीन नहीं, पूरे चौबीस हाजिर हैं। देख लो, परख लो और तोल लो! राजनीति का स्वयंवर होने वाला है।

सब चैनल भविष्य के पीएमों को दिखा रहे हैं और कटाक्ष कमेंट करके मजे ले रहे हैं। न माया आईं, न राहुल आए। न ये आए न वो आए! माया ममता में नहीं पटती! इनमें और उनमें नहीं पटती! कहा भी है-

'कहि रहीम कैसे निभे बेर-केर को संग
वे डोलत रस आपने उनके फाटत अंग।'

सबके अपने-अपने पीएम हैं। सबके अपने-अपने मोर्चे हैं। सबके अपने-अपने ताली बजाने वाले हैं। सबके अपने-अपने दांव हैं और अखाड़ा अभी-अभी खुला है।

एक का नाम लो तो दस नाम आते हैं। अंत में सब जनता की शरण होकर कहते हैं कि पीएम हम नहीं बनाते, जनता बनाती है, वही बनाएगी!

इतनी बढ़िया कहानी को काटा किन्हीं स्वनामधन्य कथित हैकिंग एक्सपर्ट सैयद सूजा ने, जिनने वाया लंदन वीडियो कान्फ्रेंसिंग करके 'ईवीएम मशीनें हैक होती हैं' का आरोप लगा कर सबको हिला दिया। अमेरिका में छिपे, अपना चेहरा कैमरे से छिपाए सूजा बोलता रहा कि मशीन में चिप लगी है।... जो इस रहस्य को जानता था, मारा गया। मैं जान बचा कर किसी तरह अमेरिका में शरण लिए हूं। चौदह वाले चुनाव की 'हैकिंग' हमने रोकी थी।...

सबसे पहले एक अंग्रेजी चैनल ने इसे पूरा दिखाया, उसके बाद दूसरों ने लिया। कुछ देर तक तो हर चैनल पर सनसनी फैली रही। उसके बाद एंकर होश में आए। फ्रेम में कपिल सिब्बल की मौजूदगी ने इस विस्फोटक किस्म की कहानी को धराशायी कर दिया। सारी व्याख्या वाया सिब्बल कांग्रेस के संदर्भ से होने लगी।

उसके बाद तो चैनलों ने खोद-खोद कर कहानी को एकदम 'फेक' करार दिया कि इसका आयोजन करने वाले कांग्रेसी थे। सूजा की कहानी पूरी तरह झूठी थी। जो पते उसने बताए, वे गलत थे। अगर वह सच होता तो मशीन लेकर हैक करके दिखाता। सिर्फ आरोप लगाता रहा कि यह एक फेक न्यूज थी।... इसके बाद चैनलों में कांग्रेस की जो कुटाई हुई, वह देखने लायक थी। वह सिब्बल की लंदन में मौजूदगी को उनका निजी मामला कह कर बचाती रही, लेकिन कहां तक बचाती? इसे कहते हैं : 'आ बैल मुझे मार!'

सूजा की इस 'फेक' कहानी से बचाया प्रियंका की राजनीतिक 'एंट्री' ने। प्रियंका के महासचिव बनाए जाने के बाद सारा मीडिया प्रियंकामय हो गया।

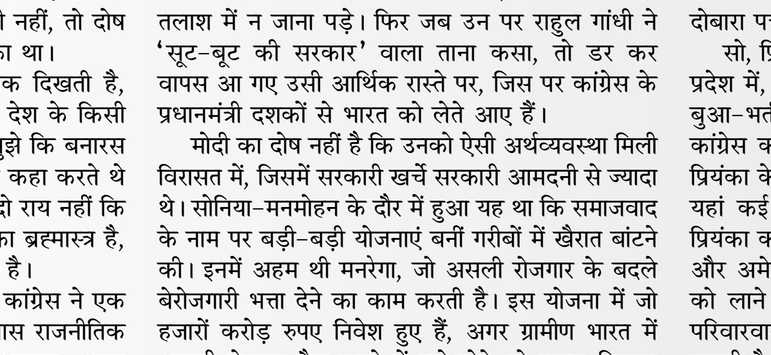

बाखबर

■ सुधीश पचौरी

> एंकर पूछते कि तीन कोने के चुनाव में प्रियंका किसे नुकसान पहुंचाएंगी? सपा, बसपा को या भाजपा को? भाजपा वाले कहते कि हमें कोई नुकसान नहीं पहुंचा सकता। हमारी योजनाएं जनता के बीच काम कर रही हैं।

प्रवक्ता प्रियंका चतुर्वेदी बोलीं : ये तो जोर का झटका धीरे से लगा है, आगे-आगे देखिए होता है क्या!

कोई बोला, 'गेमचेंजर'! कोई बोला, 'प्रियंका पूरे देश की हैं'! बीजेपी प्रवक्ता बोला : इसका मतलब है कि राहुल ने अपनी असफलता मान ली है। यह कांग्रेस का वंशवाद है।

'प्रियंका तत्व' को परिभाषित करने में एंकर और चर्चाकार देर तक बहसते रहे। कोई कहता कि प्रियंका का जादू बहुत नहीं चलने वाला। कोई कहता : वे इंदिरा की याद दिलाती हैं। कोई कहता कि यूपी में चार सीटों पर कुछ असर हो जाए, तो बहुत मानिए। कोई कहता कि बीस पच्चीस सीटों पर असर होगा। युवाओं को कांग्रेस की ओर आकर्षित कर सकती हैं। वे युवा हैं और आकर्षक व्यक्तित्व की धनी हैं।

एंकर पूछते कि तीन कोने के चुनाव में प्रियंका किसे नुकसान पहुंचाएंगी? सपा, बसपा को या भाजपा को? भाजपा वाले कहते कि हमें कोई नुकसान नहीं पहुंचा सकता। हमारी योजनाएं जनता के बीच काम कर रही हैं। मोदी सबसे पापूलर नेता हैं। प्रियंका को आगे करके राहुल ने अपनी असफलता स्वीकार की है।

ऐसे हिलते हुए पलों में 'नेशन का मूड' बताने वाले ओपिनियन पोलों के मुकाबले और कुछ देखने लायक नहीं लगता।

सो, दो चैनल 'मूड ऑफ द नेशन' बताने लगे। उनके पास सी-वोटर का सर्वे था और तीसरा चैनल कर्वी का सर्वे दिखाने लगा। तीनों के पास 'आल इंडिया सेंपल' थे।

पहले सर्वे देने वाले एबीपी का पहला सवाल चैंकाता था कि 'मोदी जीतेंगे या नहीं'!उसी का अगला सवाल था : 'राहुल में दम है या नहीं' और तीसरा सवाल था : 'तीसरा कोई है या नहीं!'

यह सर्वे बताता था कि अगर आज चुनाव हों तो एनडीए कुल मिलाकर 233 सीट ले सकती है और यूपीए को 167 मिल सकती है और 'अन्यों' 143 सीटें मिल सकती हैं!यही दूसरे चैनल पर रिपीट हुआ!

और इंडिया टुडे के कर्वी वाले ने भी लगभग ऐसी ही निराशावादी खबर दी। राज्यवार आंकड़ा बताते हुए बताया कि अगर आज चुनाव हों तो एनडीए को कुल 237 सीटें मिल सकती हैं, जबकि यूपीए को 166 सीटें मिल सकती हैं और 'अन्यों' को 140 सीटें मिल सकती हैं!

एक चैनल पर बीजेपी के एक प्रवक्ता ने तसल्ली दी कि ये सर्वे 'सवर्णों' को दिए दस प्रतिशत आरक्षण की घोषणा के पहले के हैं, यानी अगले सर्वे ही असली तस्वीर बता सकते हैं।

लेकिन सर्वेक्षक यही कहते रहे कि इस बार किसी एक मोर्चे या एक दल को बहुमत नहीं मिलने वाला। संसद लटकंत होगी। त्रिशंकु होगी! जो भी सरकार बनेगी, समझौता सरकार ही बनेगी:

'इब्तिदा-ए-इश्क है रोता है क्या
ओगे आगे देखिए होता है क्या!'